शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

तुलसी काव्य में दांपत्य संबंध

गौरव गौतम (शोधार्थी)
भाषा अध्ययन शाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

तुलसीदास कई रूपों में हमारे सामने आते है। एक रूप यह कि उनके मानस का हर समय कहीं न कहीं पाठ चलता रहता है। दूसरा विश्वविद्यालय में उनकी रचनाओं का विवरण और उस पर विश्लेषण किया जाता है। तीसरा विमर्श के चश्मे से तुलसी साहित्य को देखा जाता है और उन्हें वर्ण व्यवस्था तक सीमित कर और नारी निंदक माना जाता है। अगर पूर्ण रूप से केवल ऐसा ही है तो क्या पहले वाले तुलसी के अस्तित्व का नित विस्तार संभव हो पाता ? जब तुलसी के मानस की प्रतियां जलाई जा रही हैं और उससे राजनीतिक लाभ अर्जित करने के प्रयास चल रहे हैं, साथ ही नारी विमर्श में 'पर्सनल इज पॉलिटिकल कहा जा रहा है, तब तुलसी साहित्य में दांपत्य संबंध का अवलोकन अनिवार्य हो जाता है, क्योंकि यह समाज को आगे बढ़ाने, नई संतति को लाने की न्यूनतम इकाई है।

भूमिका

भारतीय लोक और शास्त्र जीवन को समग्रता पर देखने पर बल देता है जैसे आदर्श जीवन जीने के लिए चार पुरुषार्थ. धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की बात की गयी है वैसे ही आदर्श जीवन जीने में आने वाली विकृतियों काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर पर भी विचार किया गया है। तुलसीदास जी जीवन के कवि हैं, जिससे मानव की मनोवृत्तियों का संपूर्ण चित्रण उन्होंने अपने काव्य में किया है। तुलसीदास जी ने अपने लिए कहा है कि 'कबित बिबेक एक नहिं मोरें;[1] जिसे वे 'कागद कोरे' [2] में भी लिखने को तैयार हैं, लेकिन वह अपनी कविता के लिए भी कहते है कि 'भनिति मोरि सब गुन रहित बिस्व बिदित गुन एक।'[3] वह एक गुन है 'एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।' [4] यह रघुपति गुन ऐसा है कि जिसमें वे सभी गुण शामिल है जो निजहित और लोकहित के लिए आवश्यक व अनिवार्य है। इसी कारण उनकी जो 'स्वांत: सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा[5] है, जिसमें 'अरथु अमित अति आखर थोरे हैं। यह गाथा 'नानापुराणनिगमागमसम्मतं' [7] से ली गयी है साथ ही 'क्वचिदन्यतोऽपि'[8] यानि अन्य जगहों से भी जीवन सार लेकर इसमें जीवनयापन हेतु दिशा प्रदान की गयी है जो 'सुरसरि सम सब कहँ हित'[9] करने वाली है। दिनकर जी ने 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखा है कि "नैतिक विषयों पर धर्मशास्त्र का कहाँ क्या कहना है, यह जानने की चिंता उत्तर भारत में अधिक नहीं है। वहाँ की जनता प्रत्येक विषय पर केवल तुलसीदास की राय जानना चाहती है।"[10] तुलसी दास का प्रभाव उत्तर भारत में कितना है इसके विषय में दिनकर जी आगे लिखते है कि "तुलसीदास पर जनता का ऐसा अटल विश्वास है कि राजा, नेता और फकीर, इनमें से जो भी तुलसी के खिलाफ होगा, जनता उसके खिलाफ हो जाएगी।

अवश्य ही, ऐसा सम्मान वही कवि पा सकता है जिसने अपने देश की संस्कृति के कण-कण को अपने भीतर पचा लिया हो और जिसका हृदय अपार जनता के हृदय से बिल्कुल एकाकार हो";[11]

जनता के हृदय से तुलसी एकाकार इसीलिए हैं कि वे 'दीन रहा पर चिंतामणि वितरण करते थे।"[12] गृहस्थ जीवन के विभिन्न आयामों को अपने काव्य में प्रस्तुत करना जिससे जनमानस अपनी परिस्थिति के अनुरूप परिवर्तन कर सके। तुलसी के पूर्व वाल्मीकि, व्यास, भवभूति आदि कवियों ने जिस काव्य मार्ग की राह बनाई उन्होंने उसमें योगदान देते हुए पथ का अनुसरण किया। बालकांड में ही तुलसी कहते है कि 'मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई, तेहि मग चलत सुगम मोहि भाई।"[13]

तुलसीदास जी ने इस मग में चलते हुए न तो पिष्टपेषण किया और न ही प्राचीन परम्परा को विकृत कर अपने को नवीन बनाने की कलाबाजी दिखाई। परम्परा का सार लेकर अपने युगबोध के अनुरूप उन्होंने राम चरित को अपनी श्मानसश् सहित अन्य रचनाओं में प्रस्तुत किया।

भारतीय लोक व उसके भीतर मौजूद भिन्न-भिन्न समाजों की केंद्रीयता परिवार ही है जिसका विस्तारित और अंतरसंबध रूप समाज होता है। इस समाज की धुरी दांपत्य संबंध होता है जिसे तुलसी ने कई पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जिनमें प्रमुख हैं शिव-सती और पार्वती, दशरथ-कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी, तारा-सुग्रीव और बाली, रावण-मंदोदरी तथा राम और सीता। इनके अलावा जनक-सुनयना, गौतम ऋषि-अहल्या, अत्रि मुनि-अनुसुइया जैसे अनेक पात्र हैं जो दांपत्य के सूत्र में बँधे हैं।

तुलसीदास की लोकप्रियता का एक कारण उनका पारिवारिक कवि होना भी है। इनके पूर्व भारतीयता के धरोहर महाकाव्यों रामायण और महाभारत में भी परिवार ही वह मध्य बिंदु है जिसके इर्दगिर्द कथा का विस्तार है। तुलसीदास के बाद भी उन्हीं रचनाकारों का जुड़ाव जनता से ज्यादा रहा है जो परिवार को वरीयता देते हैं जैसे मैथिलीशरण गुप्त और प्रेमचंद।

किसी भी रिश्ते की नीव विश्वास और श्रद्धा पर ही टिकी होती है जब इनमें विचलन आता है तो रिश्तों में बिखराव आना शुरू होता है जिसका अंत संबंधों के विनाश के रूप में होता है। तुलसी बालकांड के मंगलाचरण में ही शिव-शिवानी को वंदन करते हुए कहते हैं 'भवानी शंकरौ वन्दे, श्रद्धा विश्वास रुपिणौ'[14] शिव परम योगी है लेकिन गृहस्थ भी है। इसका अर्थ यह भी है कि यदि पत्नी हमारी शक्ति है तो परिवार भव सागर के लिए बाधा नहीं है।'[15] आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'विरोधों के सामंजस्य' पर बहुत जोर देते हैं। जो शिव में अपने चरम पर है। जिसे रेखांकित करते हुए अपनी कृति 'सुन्दरकाण्ड :. एक पुनर्पाठ' में मनोज कुमार श्रीवास्तव लिखते हैं कि "विषमताओं के समाहार में यह भी कि हैं वो गौर वर्ण लेकिन नीलवर्णी मूर्तियाँ ही अधिक दिख पड़ती है नीलकंठ तो खैर वो हुए ही। वो सरूप भी है और लिंग के रूप में अरूप भी। उनके महायोग में स्थैर्य का चरम है और वह स्थाणु की तरह पूजे भी जाते है। लेकिन उनके नटराजत्व में गति का चरम भी है। कहते है कि उनसे 108 नृत्य निसृत हुए। वो आशुतोष भी है और रुद्र भी। वे भोलेनाथ भी है और अघोर भी।"[16] ऐसे ही गुणों से युक्त शिव पर पार्वती को पूर्ण विश्वास है भले ही सप्तऋषि कितना भी शिव के बारे में नकारात्मक कहे लेकिन उनका भरोसा और प्रेम शिव के प्रति अडिग है यही विश्वास राम का भी सीता के प्रति व सीता का राम के प्रति है जिसे आगे देखेंगे।

तुलसीदास जी की खास बात यह है कि वे किसी भाव अवस्था को महत्व देते हुए अन्य भाव को दबाते नहीं है क्योंकि मानव में संचारी भाव बड़ी तेजी से बदलता है जिसे स्थायी भाव में रखने के लिए तप की जरूरत होती है जैसे पार्वती जी ने मन को तप से ही स्थिर किया जिसकी कमी सती में थी। लेकिन शिव जी उनके सशंय को भी धकियाते नहीं है बल्कि जब वह राम जी की महत्ता पर विश्वास नहीं कर पाती तो तो शिव उनसे कहते है 'जों तुम्हरें मन अति संदेहू। तौ किन जाइ परीछा लेहू॥'[17] क्योंकि तुलसीदास जी का मानना है कि किसी चीज को परखे और पहचाने बिना हम उस पर पूर्ण विश्वास नहीं कर सक्ते मन से पूर्ण रूप से संतुष्ट नहीं हो सकते। 'संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।'[18] शिव जी सती से रुष्ट इसलिए नहीं होते कि उन्होंने भगवान राम की परीक्षा ली बल्कि इसलिए होते हैं कि सती ने परीक्षा लेने के बाद शिव से असत्य कहा। जब शिव सती से पूछते है 'लीन्हि परीछा कवन बिधि कहहु सत्य सब बात'[19] तब सती शिव से कहती है

'कछु न परीछा लीन्हि गोसाईं। कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाईं॥'[20]

लेकिन शिव जो तप बल से परम योगी है वे जान लेते है कि सती ने सीता जी का रूप रखकर (सतीं कीन्ह सीता कर बेषा) भगवान राम की परीक्षा ली थी। इसके बाद शिव सती को अपमानित नहीं करते बल्कि जब दक्ष ने यज्ञ में शिव जी कारण सती को नहीं बुलाया तो उनका उन्हें दुःख होता है। शिव जी कहते है

कहेहु नीक मोरेहूँ मन भावा।
यह अनुचित नहिं नेवत पठावा॥
दच्छ सकल निज सुता बोलाईं।
हमरें बयर तुम्हउ बिसराईं॥[21]

सती जी को भी उनके कृत्य के लिए आत्म ग्लानि होती है। शुक्ल जी 'लज्जा और ग्लानि' निबंध में लिखते है

"अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकांत अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है उसे ग्लानि कहते है।"[22]

सती जी इसी ग्लानि भाव में कहती है कि

'कीन्ह कपटु मैं संभु सन नारि सहज जड़ अग्य'[23]

ऊपर की लाइन के आखिरी चार शब्द - नारि सहज जड़ अग्य लिखकर या जानकर जो लोग तुलसी को नारी निंदक कहते हैं उन्हें पूरे प्रसंग को जान-समझ लेना चाहिए। देखा जा सकता है कि शिव-सती की खटपट साधारण पति-पत्नी की तरह है जो भारतीय परिवेश में आम बात है। ये आपस में मौन वार्ता भले करे लेकिन 'अन्य' यदि उनका अपमान करे वो उन्हें बर्दाश्त नहीं।

तुलसीदास जी गृहस्थ जीवन के कवि है और संयुक्त परिवार के समर्थक है जो भारतीय परिवेश की अन्यतम विशेषता है। संयुक्त परिवार की एकजुटता स्त्री-पुरुष दोनों के सहयोग और सामंजस्य से होती है। अयोध्या कैकेयी के कारण सूनी होती है और लंका रावण के कारण उजड़ती है।

जब मंदोदरी रावण को लंका दहन के बाद समझाती है कि बिना सीता को लौटाए तुम्हारा कल्याण नहीं।

'सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें।

हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें॥[24]

इसी तरह जब सेतु बंधन की खबर रावण को मिलती है जिससे वह चौंककर आश्चर्य मिश्रित स्वर में कहता है

'बांध्यो बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस।
सत्य तोयनिधि कंपति उदधि पयोधि नदीस॥'[25]

रावण की इस व्याकुलता को समझकर मंदोदरी उसे बांह पकड़कर भवन तक ले जाती है और उससे राम की तुलना करते हुए वास्तविकता से अवगत कराती है कि बैर उनसे ही करना चाहिए जिनसे जीतने की संभावना हो

नाथ बयरु कीजे ताही सों।
बुधि बल सकिअ जीति जाही सों॥
तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा।
खलु खद्योत दिनकरहि जैसा॥[26]

लेकिन 'काल बस्य उपजा'[27] अभिमान के कारण वह उसकी बात नहीं सुनता और नारि जाति के ही अवगुण बताने लगता है

नारी सुभाऊ सत्य सब कहहीं
अवगुण आठ सदा उर रहहीं।[28]

इस 'सब' में वही लोग आते हैं जो रावण की तरह ही अभिमान और दर्प से लबालब होते हैं और अपने को सही करने के लिए सामने वाले के गुण को भी अवगुण ही बताते हैं। रावण जो नारि के आठ अवगुण बताता है वे ये हैं :

साहस अनृत चपलता माया,
भय अबिबेक अशौच अदाया![29]

साहस को अवगुण वही मान सकता है जिसमें ख़ुद को 'खुदा' मानने का भाव हो। चित्रा चतुर्वेदी 'कार्तिका' के उपन्यास 'महाभारती' के केशव, कृष्णा यानी द्रौपदी को इसीलिए विशेष और सम्मानित मानते हैं कि उनमें साहस है, वह अपनी बात दृढ़ता से रखती है। वे पांचाली से कहते हैं. 'तू वीर है, साहसी है, सहनशील है! अन्य नारियों की भाँति भीरु नहीं! उचित को उचित और अनुचित को अनुचित कहनेवाली स्पष्टवादिनी है! निडर और निर्भीक ! अर्जुन धन्य हैं।'[30] लंका में सीता जी की शारीरिक स्थिति. 'कृस तन शीश जटा एक बेनी'[31] अत्यंत नाज़ुक है लेकिन फिर भी साहस अपार है। जिस रावण के चलने से अवनी डोलती थी। जिसका आना सुनकर 'देवन्ह तके मेरु गिरि खोहा।'[32] उसी रावण से सीता सीधे मुंह बात नहीं करतीं है।

'तृण धरि ओट कहती बैदेही'[33]

और पूरे आत्मविश्वास और जोश से कहती है खल सुधि नहिं रघुबीर बान की।[34]

सठ सूने हरि आनेहि मोहि।
अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।।[35]

जो लोग आज रावण का गुणगान करते हैं कि उसने पर नारी सम्मान किया वे यह देख लें कि रावण मंदोदरी के सामने ही 'मंदोदरी आदि सब रानी को दासी बनाने की बात कहता है। जो अपने घर की महिलाओं की इज्जत नहीं करता वह दूसरों के घर की स्त्रियों की इज्जत ख़ाक करेगा। वैसे भी, रावण ने सीता का अपहरण किया था उन्हें उनकी मर्ज़ी से लेकर नहीं आया था।

तुलसीदास जी के समय में राजपुताना और अन्य देशी राज्यों में भी अनेक विवाह का प्रचलन था। मुगलों के हरम की तो कहानी ही अलग है जहाँ किसी स्त्री को पाने के लिए उसके पति को ही मरवा दिया जाता था। इससे व्यभिचार फैलता था। राज्य के पतन व समाज के विघटन के कारणों में से एक बहुविवाह भी था। इससे स्त्री का वस्तुकरण होता था सो अलग। इसी कारण तुलसीदास ने अपनी राज्य की आदर्श व्यवस्था के लिए कहा कि

एकनारि ब्रत रत सब झारी।
ते मन बच क्रम पति हितकारी॥[36]

यानी पति का हित वही नारी करेगी जिसकी निष्ठा अपनी पत्नी के लिए हो। निष्ठावान और सम्मान देने वाले पति की ही सेवा करने का उपदेश अरण्यकांड में अनुसुइया सीता को देती है। वे कहती हैं यदि पति 'ब्रद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना[37] हो तो भी उसकी सेवा करनी चाहिए। किंतु अनुसुइया यह नहीं कहती कि धोखा देने वाले, परनारी गमन करने वाले की सेवा करे। तुलसीदास नारी-पुरुष के मध्य अंतरावलम्बन की स्थिति के समर्थक दिखाई पड़ते हैं।

लंका का विघटन रावण की मदान्धता के कारण हुआ तो अयोध्या में सूनापन दशरथ की कैकेयी के समक्ष दुर्बलता के कारण हुआ। यद्यपि दशरथ ने राम को वन गमन के लिए एक भी बार नहीं कहा। उनकी तो आंतरिक इच्छा थी कि राम उनकी बात को न माने और घर में ही रहे। 'बचनु मोर तजि रहहिं घर परिहरि सीलु सनेहु ।[38] लेकिन राम भवन की जगह वन को श्रेष्ठ मानते है और पिता द्वारा दिए गए राज को ऐसे छोड़ देते देते हैं जैसे पथिक रास्ते को छोड़ देता है क्योंकि उसे रास्ते से कोई मोह लगाव नहीं होता। 'राजिवलोचन राम चले तंजि बाप को राज वटाऊ की नाई।[39]

दशरथ कैकेयी के वशीभूत है। भयवश और कामवश दोनों कारण। जब कैकयी कोप भवन में होती है तो उसकी हरकत को कामवश देखते हैं :

केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई।
मानहुँ सरोष भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारई॥
दोउ बासना रसना दसन बर मरम ठाहरु देखई।
तुलसी नृपति भवतब्यता बस काम कौतुक लेखई॥[40]

लेकिन जब वह पहले वर के रूप में 'देहु एक बर भरतहि टीका [41] और दूसरा वर 'तापस बेष बिसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी **42** मांगती है तब 'गयउ सहमि नहिं कछु कहि आवा [43] वाली स्थिति हो जाती है और इस अवसर पर जब तुलसीदास जी लिखते हैं कि :

'कवनें अवसर का भयउ गयउँ नारि बिस्वास।
जोग सिद्धि फल समय जिमि जतिहि अबिद्या नास॥[44]

तो उन्हें नारी निंदक कहा जाता है लेकिन जब बाली अपनी पत्नी तारा की बात नहीं मानता है तो भगवान राम उसे मूर्ख कहते हैं :

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।
नारी सिखावन करसि काना।[45]

कुछ कथनों और उद्धरण से न तो तुलसी नारी निंदक होते है न स्त्री समर्थक। उनके समय में जो समाज की सीमा थी उसके समाजीकरण के कारण कुछ कमियाँ तुलसी, कबीर सब में रह जाना स्वाभाविक है। चूँकि मीरा स्वाभोग्या थी इसी कारण 'लोकलाज कुल शृंखला तजि मीरा गिरिधर भजी'

तुलसीदास सामाजिक बंधन में हैं, लेकिन वह रूढ़ि मानने को बाध्य नहीं दिखाई पड़ते। इसे पार्वती के 'अपर्णा' बनकर परिवार के विरुद्ध शिव को वरण करने और फुलवारी प्रसंग में देखा जा सकता है। तुलसी गलदश्रु भावुकता को स्वीकार नहीं करते। उनके साहित्य में प्रेम जिम्मेदारी के साथ है जिसमें दायित्व निर्वहन अनिवार्य है। राम के मन को यदि सिय का रूप लुभाता है और स्थिति यह हो जाती है कि सीता का मुख चंद्रमा और और रामजी के नयन चकोर हो जाते है 'सिय मुख ससि भए नयन चकोरा॥[46] सीता भी जब राम को देखती है तो देखती ही रह जाती है लेकिन पिता का प्रण भी उन्हें याद रहता है

नख सिख देखि राम कै सोभा।
सुमिरि पिता पनु मनु अति छोभा॥[47]

यानी तुलसी के यहाँ प्रेम जीवन से पलायन नहीं करता बल्कि जीवनसागर में तैरने के योग्य बनाता है। यह प्रेम शूपर्णखा के भाव की तरह समर्पण विहीन नहीं है जो पहले राम से कहे कि 'तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग बिधि रचा बिचारी[48] लेकिन जब राम उसे लक्ष्मण के पास जाने को कहते हैं तो तुरंत चली जाती है। 'इसी छुद्र, गर्हित मानसिकता ने आज रिश्तों की डोर को ढीला कर दिया है। अकारण ही नहीं लोग बिना शादी के रहना पसन्द कर रहे हैं। यह रिश्तों के प्रति अविश्वास को दर्शाता है। रिश्ते पदार्थ के मध्य नहीं स्वभाव के तादात्म्य से विकसितए पल्लवित, पुष्पित व फलित होते हैं। इसीसे दो लोगों के बीच एकाकार होता है जिसमें छल, कपट, दुराव, लुकाव, छिपाव आदि की जगह नहीं होती है बल्कि उनका मन एक हो जाता है जिससे दूसरा व्यक्ति पहले के बिना कहे ही यह अनुमान लगा लेता है कि वह क्या करना चाहता है, क्या कहना चाहता है। जब सीता जी वन में चलते हुए थकान भरी आवाज में राम से पूछती है कि अभी कितना और चलना है तो आवाज से ही राम सिया की थकान और परेशानी को समझ जाते हैं, जिससे अनायास ही उनकी आँखों से आँसू निकल आते हैं :

पुर तें निकसी रघुवीर.बधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल कीए पुट सूखि गये मधुराभर वै॥
फिरि बूझति हैं चलना अब केतिक, पर्ण-कुटी करिहौ कित ह्वै ?।
तिय की लखि धातुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चली जल च्वै॥[49]

रघुवीर जानते है कि सीता थक चुकी हैं तो वे उन्हें उचित आसन प्रदान कर उनके पैरों से कंकड़ और काँटों को निकालते हैं, जिससे जानकी के भी आँखों में आँसू आ जाते हैं।

तुलसी रघुबीर प्रिया श्रम जानिकै बैठि बिलंब लौं कंटक काढ़े।
जानकी नाह को नेह लख्योए पुलको तनुए बारि बिलोचन बाढ़े॥[50]

इस प्रसंग से तुलसीदास आपसी तालमेल, साहचर्य व भाव के साझेपन को बतलाते हैं। पुरुष की मर्दानगी स्त्री के यह ऊपर जुल्म करने में नहीं बल्कि उसके दर्द को कम करने में है। राम सीता की भावनाओं का ख्याल रखते हैं उनके विचार को सुनते ही नहीं गुनते भी हैं तुलसीदास जी की सीता तो विनीत स्वर में वन जाने के लिए राम से कहती हैं। राम जब वन के कष्टों को बताते हैं कि 'काननु कठिन भयंकरु भारी। घोर घामु हिम बारि बयारी॥ [51] तो सीता राम से सीधे अपनी बात न कहकर कौशल्या से कहकर राम को अपनी बात सुनाती है कि :

मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं।
पिय बियोग सम दुखु जग नाहीं॥[52]

लेकिन वाल्मीकि की सीता तो राम को 'पुरुष के वेष में स्त्री' राम जामातरं प्राप्य स्त्रियं पुरुषविग्रहम् [53] तक कह देती है जब वह उन्हें वन के कष्ट बताकर उन्हें ले जाने से मना करते हैं। लेकिन राम सिया को वन के कष्टों में देख उनकी सहायता ही करते हैं उन्हें ताना नहीं मारते। यदि कोई सीता को मानसिक या शारीरिक रूप से कष्ट देता है तो उसे उचित दंड भी देते हैं चाहे वह देवराज इंद्र का पुत्र जयंत ही क्यों न हो। यानी सीता के मान-सम्मान के लिए राम हर तरह से अपने दायित्व का निर्वहन करते है। सीता उनकी शक्ति है। संबल है। उनके और सीता के मध्य जो रिश्ता है, जो समझ है उसे वो दोनों ही जानते है। राम अपना संदेशा भी हनुमान जी से यही भिजवाते है

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं।
जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं॥[54]

और जब जानकी यह संदेश पाती है तो राम में विलय हो जाती है।

प्रभु संदेसु सुनत बैदेही।
मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही॥[55]

वे पल, वे लम्हें सब याद आए होंगे जो साथ बिताए थे। राम को भी जब सीता की विपत्ति के बारे में पता चलता है कि वे कितने कष्ट में है तब उनके आँखें ही उनकी बात बोलती है

सुनि सीता दुःख प्रभु सुख अयना।
भरि आए जल राजिव नयना॥[56]

ऊपर हमने देखा कि वन के कष्ट देख राम के आँसू आते हैं और अब लंका का दुःख सुनकर। रावण से युद्ध करते समय जब वो पाते हैं कि 'अन्याय जिधर, है उधर शक्ति।[57] और जामवंत की सलाह पर 'आराधन का दृढ़ आराधन से दो उत्तर [58] देने के लिए 'शक्ति की मौलिक कल्पना' के लिए पूजन करने के लिए बैठते है। राम अपनी साधना में रत है लेकिन नौवे दिन 'दुर्गा छिपकर हँस उठा ले गई पूजा का प्रिय इंदीवर।[59] राम ऐसी स्थिति में है कि आसन छोड़ नहीं सकते तब भी उनके मन की बात पहले उनके नयन ही करते है :

'भर गए नयनद्वय [60] फिर राम के मन के बात उनके मुख से निकलती है

धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध,

धिक् साधन, जिसके लिए सदा ही किया शोध!
जानकी! हाय, उद्धार प्रिया का न हो सका।[61]

लेकिन राम हताश होने वालों में से नहीं हैं उनका जोर प्रयास में है जो सिद्धी की ओर उन्हें ले जाता है। बात जब प्रियजनों की हो तो प्रयत्न सम्पूर्णता में होता है चाहे उसके लिए जो भी करना पड़े राम निराश नहीं होते। उनका मन कोई दैन्य कोई विनय नहीं जानता। लेकिन अपने प्रति। राम अपनों के खातिर अपने लिए कठोर हो सकते है वो अपने नेत्रदान भी कर सकते हैं :

दो नील कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण
पूरा करता हूँ देकर मातः एक नयन।[62]

राम-सीता की आपसी समझ लक्ष्मण के प्रति भी है। दोनों उन्हें पुत्रवत् मानते है। सीता वन मार्ग में राम से यही कहकर रोकती है कि 'जल को गये लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय! छाँह घरीक हैं ठाढे। [63] सुमित्रा भी जब लक्ष्मण को वनगमन की अनुमति यही कहकर देती है कि 'तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही॥[64] मन, वचन और कर्म से लक्ष्मण इसका पालन करते हैं वैदेही-राम भी करते है। सीता जब अपहरित होती है उसके पहले वह लक्ष्मण को कड़े शब्द कहकर भेजती है जिसका दुःख होने बराबर रहता है। लंका में त्रिजटा से भी वो अपनी बात कहती है कि मुझे जो भी दुःख है वो लक्ष्मण को कटु वचन कहने के ही कारण है

जेहि विधि मोहि दुःख दुसह सुहाए
लछिमन कहुं कटु वचन कहाए [65]

जब लंका में हनुमान जी से सीता से दूसरी बार मिलते हैं तो वह उनसे पूछती है

कहहु तात प्रभु कृपा निकेता
कुसल अनुज कपि सेन समेता [66]

हनुमान भी सीता के लक्ष्मण के प्रति स्नेह से परिचित हैं, इसीलिए जब वह पहली बार सीता जी से मिलते है तो दोनों बंधुओं की कुशलता की बात करते है। 'मातु कुशल प्रभु अनुज समेता। [67]

यही लक्ष्मण जब मूर्छित हो जाते है, बात उनके जीवन-मरण पर बन आती है। तो राम की सारी प्रभुता किनारे हो जाती है और आर्त स्वर में जैसे व्यक्ति कहता है मैं ये न करता, मैं वो न करता वैसे ही राम भी कहते है कि काश मैं भी पिता की बात नहीं मानता

जाँ जनतेउँ बन बंधु बिछोहू
पिता बचन मनते नहिं ओहू
सुत बित नारि भवन परिवारा
होहिं जाहिं जग बारहिं बारा
अस विचारि जियँ जागहु ताता।
मिलइ न जगत सहोदर भ्राता [68]

इसी क्रम में तुलसी के राम यह भी कहते है कि

जैहउँ अवध कौन मुहु लाई।
नारि हेतु प्रिय भाई गँवाई॥

बरु अपजस सहतेउँ जग माहीं।
नारि हानि बिसेष छति नाहीं [69]

इस प्रसंग को बिना संदर्भित किये कुछ चतुर सुजान व्याख्या देने लगते है कि यह नारि को अपमानित करने उसके मान का अवमूल्यन करने वाली बात है। सीता जी का लक्ष्मण के प्रति स्नेह हम ऊपर देख चुके है यदि सीता को यह पता चलता कि लक्ष्मण इस हालत में है तो उनकी भी क्या वही प्रतिक्रिया नहीं होती जो राम की थी या फिर उससे भी करुणामय हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अवध जाकर सुमित्रा और उर्मिला को मुख दिखाने की बात हो रही है उस कौशल्या को दिखाना है जिसे चित्रकूट में राम से ज्यादा चिंता भरत की है। आज भले ही एक भाई दूसरे का हिस्सा हड़प कर मानस पाठ और भोज का आयोजन करता दिख जाता है लेकिन इसमें तुलसी का क्या दोष ? उनके समय जो संस्कृति का अवमूल्यन हो रहा था उसके प्रति सचेत व सजग रहते हुए वे उस भावधारा को प्रवहमान रखने के प्रयास में थे जो भारतीयों को स्पंदित करके उन्हें भीतर से मजबूत बनाती है।जिससे भारतीय लोक मध्यकालीन आक्रमणकारियों के कुठाराघात व यूरोपीय कंपनियों के विचाराघात से अपनी रक्षा कर सके।

नव औपनिवेशिक दौर में जब राम को कसाई और कृष्ण को कामुक बताया जा रहा है। शिव को 'अनार्य' घोषित कर भारत को विखंडित करने का कुत्सित प्रयास किया जा रहा है। वहीं जो राम बिना राजनीतिक पचड़े में पड़े स्वयं प्रजा के उद्धार के लिए उनके पास जाते है। परिवार समेत उन्हीं की तरह रहकर उन्हें संस्कारित करते है उन्हीं राम नाम के बाण को राजनीति के कोदंड में साधकर सत्ता प्राप्ति के लक्ष्य के लिए भिन्न-भिन्न तरीके से छोड़ कर लक्ष्य प्राप्ति का प्रयत्न किया जाता है जिसके लिए 'मानस' को जलाने जैसा कुकर्म भी करते है यह तर्क देते हुए कि यह ग्रंथ समाज को प्रतिगामी बनाता है ऐसे लोगों से क्या ही उम्मीद की वे रामविलास शर्मा के आलेख 'तुलसी साहित्य में सामंत विरोधी मूल्य' को कभी पढ़ेंगे। तुलसी की कविता की लोकप्रियता का कारण यह है कि हमारे देश का यथार्थ उसमें मौजूद है [70] समाज को सुपथ में चलने के लिए अनिवार्य है कि उसकी न्युनतम इकाई परिवार में संतुलन, समन्वय, साहचर्य, सहनशीलता उभय पक्षों के ओर से हो जिसका स्रोत तुलसीदास जी का साहित्य है।

संदर्भ सूची

1 रामचरितमानस 1/8/6
2 वही
3 रामचरितमानसए 1/9
4 वही 1/9/1
5 रामचरितमानस, बालकांड, मंगलाचरण
6 2/293/1
7 रामचरितमानस, बालकांड, मंगलाचरण
8 वही
9 रामचरितमानस, 1/13/5
10 रामधारी सिंह दिनकर संस्कृति के चार अध्याय तृतीय संस्करण 1962, उदयाचल प्रकाशन, पेज 340
11 वही
12 जयशंकर प्रसाद, संपूर्ण प्रसाद काव्य, कानन कुसुम कविता संग्रह

13 रामचरितमानस, 1/12/5
14 रामचरितमानस, बालकांड, मंगलाचरण
15 मनोज कुमार श्रीवास्तव, सुंदरकांड एक पुनर्पाठ पेज 75
16 वही
17 रामचरितमानस, 1/51/1
18 रामचरितमानस, 1/5/1
19 रामचरितमानस, 1/55
20 रामचरितमानस, 1/55/1
21 रामचरितमानस, 1/61/1
22 रामचंद्र शुक्ल चिंतामणि भाग 1, लज्जा और ग्लानि निबंध से
23 रामचरितमानस, 1/59
24 रामचरितमानस, 5/35/5
25 रामचरितमानस, 6/5
26 रामचरितमानस, 6/5/3
27 रामचरितमानस, 6/7/3
28 रामचरितमानस, 6/15/1
29 रामचरितमानस, 6/15/2
30 चित्रा चतुर्वेदी 'कार्तिका महाभारती 'भारतीय ज्ञानपीठ, पेज 70
31 रामचरितमानस, 5/7/4
32 रामचरितमानस, 1/18/3
33 रामचरितमानस, 5/8/3
34 रामचरितमानस, 5/8/4
35 रामचरितमानस, 5/8/5
36 रामचरितमानस, 7/29/4
37 रामचरितमानस 3/4/4
38 रामचरितमानस, 2/44
39 कवितावली, 2/1
40 रामचरितमानस, 2/24/5
41 रामचरितमानस, 2/28/1
42 रामचरितमानस, 2/28/2
43 रामचरितमानस, 2/28/3
44 रामचरितमानसए 2/29
45 रामचरितमानस, 4/8/5
46 रामचरितमानस, 1/229/2
47 रामचरितमानस, 1/230/2
48 रामचरितमानस, 3/16/4
49 कवितावली, अयोध्याकांड

50 वही

51 रामचरितमानस, 2/61/2

52 रामचरितमानस, 2/63/4

53 वाल्मीकि रामायण, 2/25/26

54 रामचरितमानस, 5/14/3/4

55 रामचरितमानस, 5/14/4

56 रामचरितमानस, 5/31/1

57 सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, राम की शक्ति पूजा कविता से

58 वही

59 वही

60 वही

61 वही

62 वही

63 कवितावली, अयोध्याकांड

64 रामचरितमानस, 2/73/1

65 रामचरितमानस, 6/98/4

66 रामचरितमानस, 6/106/3

67 रामचरितमानस, 5/13/5

68 रामचरितमानस 6/60/4

69 रामचरितमानस 6/60/6

70 विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकहितवादी तुलसी, भूमिका